ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-2, No.-2, **PP-95-96**,YEAR-2015

ग्रामीण जीवन में धर्म का स्वरूप

❑ **डॉ0 विनोद कुमार मिश्र**

सारांश– *ग्रामीण धर्म तथा ग्रामीण समाज की जीवंत प्रक्रियाओं के निर्धारण में उस की महत्वपूर्ण भूमिका का सांगोपांग अध्ययन उस समाज के अध्ययन का आवश्यक अंग है। समस्त संसार के समाजशास्त्रियों द्वारा यह मान लिया गया है कि नगरीय जनता की अपेक्षा ग्रामीण जनता की धर्म की ओर अधिक प्रवृत्ति होती है। ग्रामीणों का प्रकृति पर निर्भरता और वैज्ञानिक संस्कृति के अभाव के कारण उनमें अधिकाधिक धार्मिकता उत्पन्न करते हैं। ग्रामीण समाज के व्यक्ति शिक्षित, परम्परावादी, रूढ़िवादी, भाग्यवादी तर्क रहित होते हैं पर इनकी प्रकृति की क्रिया–कलापों में अटूट आस्था होती है। प्रकृति की असंख्य घटनाएँ इन के लिए अजनबी, व अनस मझी हैं और उन के तर्क से परे हैं, उन में यह किसी अदृश्य शक्ति को देखते हैं। इ सी लिए ग्रामीण लोगों का धार्मिक दृष्टि कोण उन के बौद्धिक , भावनात्मक तथा क्रियात्मक जीवन पर अत्यंत प्रबल रूप से प्रभुत्व जमाये हुए हैं। जीवन का कोई भी ऐसा अंग न हीं है जो धर्म से ओत–प्रोत तथा अनुरंजि तन हो। उन का पारिवारिक जीवन जातीय जीवन, सामान्य सामाजिक जीवन, आर्थिक तथा आमोद–प्रमोदमय जीवन भी न्यूनाधिक रूप में धार्मिक नियमों से शासित है। इसका मुख्य कारण है कि उनके जीवन का आध ार प्रकृति और धर्म है। इसीलिए वे पेड़–पोधे, पशु, हल–बैल, नदी, पहाड़, वर्षा, सूर्य आदि की पूजा करते हैं। इनका सीधा सम्बन्ध प्रकृति से है। इनका धर्म इनके जीवन के व्यवहार और कर्म में प्रदर्शित होता है।*[1]

अध्ययनों से पता चलता है कि ग्रामीण और जनजातीय समाज में धार्मिक पुस्तकों के आधार पर धर्म की व्याख्या न हीं की गई है। लिखित रूप में ग्रामीण धर्म की कोई आचार–संहिता न हीं है और न ही इसकी कोई व्याख्या की गई है। ग्रामीण धर्म लोक आचरण में झलकता है। ग्रामीण मान्यतायें, विश्वास, परम्पराएँ, रीति –रिवाज, ग्रामीण गाथाएँ, ग्रामीण धर्म की आधार शिला है। ग्रामीण धर्म लोक धर्म का ही दूसरा नाम है। उदाहरण के तौर पर देखे तो कुछ ग्रामीण जीवन में कि सी वृक्ष के नीचे मिट्टी की गठिया बनी होती है जो उन के पूर्व जों की होती है। स्त्रियाँ स्नान कर नित्य उन की पूजा करती है । इस विश्वास के साथ कि पूर्वज स्वर्ग से उन को आशीर्वाद देते हैं। किसी परम्परागत मान्य ग्रामीण चबूतरे पर बच्चों का मुंडन तथा अन्य संस्कार कि ये जाते हैं। ग्रामीण जीवन में जहाँ अनेक मन्दिर है वहीं अनेक प्रकार के देवी–देवता भी हैं। ये अलग–अलग कार्यो ं के लिये पूजे जाते हैं। पर्यावरण की रक्षा की दृष्टि से पीपल की पूजा विष्णु के रूप में, नीम की पूजा शीतला एवं दुर्गा देवी के रूप में, अशोक –इन्द्र के रूप में, कदम–कृष्ण के रूप में, कमल–लक्ष्मी के रूप में। कृषि सम्बंधी देवी देवता की भी पूजा इस दृष्टि कोण से किया जाता रहा है कि प्राकृतिक संकटों से रक्षा होगी । व्यवसाय के लिए भी अलग देवी देवता है । इस तरह हम कह सकते हैं कि ग्रामीण धर्म का विकास प्रकृति से जोड़कर हुआ।[2] ग्रामीण वेद, पुराण, मनुस्मृति, उपनिषद आदि ग्रन्थों में प्रचलित कर्मकाण्डों से हटकर उन कर्मकाण्डों को कर ने पर अधिक जोर देते हैं जो उन्हें पूर्वजों से विरासत में मिली है। ग्रामीण जीवन में जब कोई संकट आता है तो सम्पूर्ण ग्रामीण समाज के लोग एकत्र होकर एक विशेष स्थान पर विशेष देवी–देवता की पूजा करते हैं और इस तरह की पूजा में धर्म ग्रन्थों के पाठ नहीं होते बल्कि सहज रूप से सिन्दूर, आम की पत्ती, नारियल व बताशे आदि चढ़ा कर सामूहिक प्रार्थना करते हैं कि

असिस्टेंट प्रोफेसर, जगद्गुरू रामभद्राचार्य वि.वि ., चित्रकूट, (उ0प्र0) भारत

वे विशेष संकट से उन्हें मुक्ति दिलायें और इस तरह के पूजा पाठ और अनुष्ठानिक क्रियाओं में पुरोहित न हीं होता। पुरोहित कुछ संस्कारिक कर्मकाण्ड को पूर्ण करता है जैसे–विवाद, मुण्डन, अन्त्येष्ठि आदि। उदाहरण के लिए खेत को पाले (ओला) से बचाने के लिए और अधिक उपज हो इस के लिए बुन्देलखण्ड के कुछ गाँवों में लक्ष्मण बाबा की पूजा गाँव के लोग एक टीले पर एकत्र होकर प्रार्थना करते हैं, मिठाई या बताशे चढ़ाते हैं। कभी–कभी नारियल फोड़कर पूज्य स्थान पर चढ़ाते है और यही प्रसाद के रूप में वितरित करते हैं। ग्रामीण समाज में धर्म और प्रकृति का गहरा सम्बंध होने का ही प्रमाण है देवोत्थान एकादशी को गन्ने से पूजा की जाती है होली में नई फसल से पूजा की जाती है। भूमि, नदी, पहाड़, आकाश, तारे को प्रतीक रूप में बना कर पूजा की जाती है। आम, तुलसी और केले के पत्ते पवित्र माने जाते हैं इनका धार्मिक कार्यो में प्रयोग होता है। गाँवों में अनेक ऐसी घटनाओं का उदाहरण देखने को मिलता है जो कालान्तर में चलकर धर्म का अभिन्न अंग बन जाते हैं। जैसे उदाहरण के लिए किसी दुल्हे का मार्ग में किसी घटना के फल स्वरूप निधन हो गया था वहाँ पर गाँव वालों ने चबूतरा बना दिया उसका नाम दुल्हा देव पड़ गया , दुल्हा देव की पूजा होने लगी। इसी तरह बुन्देलखण्ड में हर दौल की पूजा लड़की के विवाह के समय करते हैं।[3] इस प्रकार ग्रामीण समाज का यदि अवलोक न किया जाये तो सहज ही देखते हैं कि ग्रामीण समाज में स्थानीय देवी–देवताओं और बाबाओं का अत्यधिक महत्व है, जिनका धार्मिक ग्रन्थों में कहीं उल्लेख न हीं है। इस तरह की गाथाएँ ग्रामीण धर्म का अभिन्न अंग बन गया है और वह आज भी किसी न किसी रूप में जीवित है। किसी भी देश की लोक संस्कृति को देख कर उस देश की संस्कृति का अनुमान लगाया जा सकता है कि उस देश के मूल्य, विश्वास, धारणाएँ , मान्यताएँ, परम्परायें, रीति–रिवाज, रूढ़ियाँ आदि क्या है ? इन के मूल में लोक–संस्कृति है और धर्म का मूल स्रोत ग्रामीण समाज है। ग्रामीण लोक–कलाएँ, लोक–नृत्य, लोक गाथाओं में धर्म के विविध रूप देखने को मिलते हैं।[4] ग्रामीण धर्म–प्रकृति की गोद से प्रस्फुटित हुआ और उन के व्यावहारिक जीवन में समाहित हो गया। गाँव के संकट, प्राकृतिक प्रकोप, सुख–दुख किसी एक व्यक्ति का नहीं होता है। इसी लिए यहाँ धार्मिक उत्सवों एवं पूजा में सम्पूर्ण समाज की भागीदारी होती है। यह भावना सामूहिक एकता भी स्थापित करती है। वहाँ एक सब के लिए और सब एक के लिये होते हैं।[5] किन्तु आज नगरीय चकाचौंध, भौतिकवादी, व्यक्तिवादी संस्कृति ग्रामीण सामाजिक संरचना के मूल स्वरूप को परिवर्तित कर रहा है। नगरीय सभ्यता और भौतिक संस्कृति का प्रवेश तीव्रता से ग्रामीण समाज में हो रहा है, गाँव में शिक्षा का विकास हो रहा है। प्रौद्योगिकी और विज्ञान से निर्मित चीजे और मशीने कृषि कार्य में प्रयोग की जाने लगी है, फसल के अनेक वैज्ञानिक ढंगों का विकास किया गया है। औद्योगीकरण, आधुनिक बनने की होड़, राजनैतिक उथल–पुथल, सरकार की अनेक ग्रामोन्मुखी योजनाओं ने गाँव के परम्परागत स्वरूप को बदल दिया है। व्यवसाय के नये स्वरूप ने जजमानी व्यवस्था को नष्ट कर दिया है। लोग धर्म सम्बंधी अनेक उत्सवों को अन्ध विश्वास का नाम देकर नकार ने लगे हैं। इस तरह हमारी प्राचीन लोकसंस्कृति से जुड़ा धर्म अपनी जमीन से विलीन होता जा रहा है। निश्चय ही अन्धविश्वास और रूढ़ियाँ समाप्त होनी चाहिये परलोक धर्म यदि समाप्त हो गया तो ग्रामीण समाज की पहचान भी विलुप्त हो जायेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Desai A.R., Rural Sociology in India, Papular Prakashan Bombay, 1968.
2. Dubey S.C., Contemporary India, Community Development Programme, 1958,.
3. सिंह वी.ए. एवं जन्मेजय सिंह, ग्रामीण समाज शास्त्र, विवेक प्रकाशन, दिल्ली– 7 , 2006
4. पाण्डेय, पी.एन., ग्रामीण विकास एवं संरचनात्मक परिवर्तन, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000
5. प्रसाद, नागेश्वर, ग्रामविकास तीव्र करने की योजना, भारतीय सामाजिक चिन्तन, मार्च– जून 1978

*****